International Journal of Sanskrit Research 2016; 2(1): 36-38

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2016; 2(1): 36-38
© 2016 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 26-11-2015
Accepted: 27-12-2015

सरिता आर्या
सह–आचार्या राजकीय महाविद्यालय घरौंड़ा (करनाल) हरियाणा, भारत।

Correspondence
सरिता आर्या
सह–आचार्या राजकीय महाविद्यालय घरौंड़ा (करनाल) हरियाणा, भारत।

ऋग्वेद के द्वितीय मण्डलानुसार अग्नि का स्वरूप

सरिता आर्या

भारतीय संस्कृति की प्राचीनतम और प्रथम धरोहर 'वेद' हैं, जिन्हें अपौरूषेय अर्थात् ईश्वरकृत माना गया है। समाधि की अलौकिक स्थिति में मंत्रों का दर्शन करने वाले ऋषि अग्नि ने ऋग्वेद का, वायु ने यजुर्वेद का, आदित्य ने सामवेद का व अंगिरा ने अथर्ववेद का ज्ञान प्राप्त करके इनको लोक में प्रकाशित किया। चारों वेदों में ऋग्वेद को प्राचीनतम व महत्त्वपूर्ण माना गया है। ऋग्वेद में 10 मण्डल है जो 85 अनुवाकों में विभक्त हैं व अनुवाक सूक्तों में, ऋग्वेद में कुल 1028 सूक्त हैं। प्रत्येक सूक्त में मंत्रों की संख्या अलग–2 है। ऋग्वेद में कुल 10589 मन्त्र हैं।[1] जो अलग–2 देवताओं की स्तुति में कहे गए हैं। ऋग्वेद में 33 देवता हैं जिनको स्थान के आधार पर तीन प्रकार का माना गया है। पृथिवी स्थानीय, अन्तरिक्ष स्थानीय, द्युस्थानीय। पृथिवी स्थानीय देवताओं में अग्नि देव का प्रमुख स्थान है। ऋग्वेद का आरम्भ अग्निदेव की स्तुति से होता है।[2] ऋग्वेद में अग्नि के निमित्त 200 पूर्ण सूक्त और अनेक सूक्तांश हैं।

ऋग्वेद के द्वितीय मण्डल में अग्नि के निमित्त 10 सूक्त हैं। ये सूक्त गणना के आधार पर इन्द्र देवता के पश्चात् दूसरे स्थान पर हैं।

अग्नि शब्द की व्युत्पत्ति

यज्ञ के अवसर पर सर्वप्रथम अग्नि को ही स्थापित किया जाता है। लौकिक कार्यों की पूर्ति भी अग्नि के द्वारा ही सम्भव है। वैदिक और लौकिक कार्यों में अग्रणी होने के कारण ही इस देवता का नाम 'अग्नि' है।

1. आचार्य यास्क के अनुसार

आचार्य यास्क के अनुसार 'अग्नि' को अग्नि इसलिये कहा जाता है क्योंकि वह अग्रणी है, वह यज्ञ में सबसे पहले प्रणीत (निर्मित) की जाती है, झुकती हुई वह अन्य वस्तुओं को अपना अंग बना लेती है। स्थौलाष्ठीवि का मत है कि अग्नि गीला करने वाला नहीं है।[3]

2. आचार्य शाकपूणि के अनुसार

आचार्य शाकपूणि के अनुसार 'अग्नि' चार धतुओं से निष्पन्न होता है $\sqrt{}$ इ (जाना), अञ्ज् (चमकना), दह् (जलना) $\sqrt{}$ नी (ले जाना), इनमे से $\sqrt{}$ इ से अ, अञ्ज् या दह् से 'ग' और $\sqrt{}$ नी से बाद में लगने वाले 'नि' को लेते है।[4]

अग्नि का स्थान एवं जन्म

द्वितीय मण्डलानुसार यह अग्नि उत्कृष्ट स्थान द्युलोक, मध्यम स्थान अन्तरिक्ष और पृथिवी लोक में स्थित सबके लिए उपास्य है।[5] अग्नि का जन्म दो अरणियों से होता है अत' अरणियां ही उसकी जननी हैं।[6] इन्द्र ने अग्नि को दो पाषाणों से उत्पन्न किया।[7] व अग्नि को दस कन्याओं जो कि मनुष्य की दस अंगुलियाँ हैं– ये उत्पन्न भी कहा गया है।[8] अग्नि को जल, पत्थर वन और औषधियों से भी उत्पन्न माना जाता है।[9]

अग्नि के रूप

अग्नि के तीन रूप कहे गए हैं– आध्यात्मिक अग्नि, अधिदैविक अग्नि, आधिभौतिक अग्नि।

आधिदैविक अग्नि

आधिदैविक अग्नि से तात्पर्य सूर्य से है। वह सात रश्मियों से युक्त अग्नि इस सारे संसार में व्याप्त

है।[11] सूर्य प्रतिदिन उदय होकर समस्त विश्व के प्राणियों, औषधियों, वनस्पतियों को उष्णता प्रदान करता है। इसी उष्णता से औषधी, वनस्पतियों तथा वृक्ष के फल खाने योग्य बनते हैं।[12] इसी उष्णता से समस्त प्राणी बल धारण करते हैं।

आधिभौतिक अग्नि

अग्नि शब्द मूलतः भौतिक अग्नि का ही बोधक है। यज्ञ के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण देवता के रूप में भौतिक अग्नि को स्थान मिला हैं। क्योंकि अग्नि यजमान और देवताओं के बीच सम्बन्ध स्थापित करने की एकमात्र कड़ी है। भौतिक अग्नि घर में पवित्रता करती है। होम अग्नि रोगजन्तु नष्ट करती है। जल और वायु को पवित्र करती है।[13]

अग्नि का मानवीकृत रूप

अग्नि यद्यपि सबसे प्राचीन व वृद्ध है तो भी नित्य एक नवीन युवक के रूप में उत्पन्न होता है।

यह देव वृक्ष एवं वनस्पतियों पर अपनी ज्वालारूपी जिह्वा को अत्याधिक घुमाता है। अग्नि को देवताओं का मुख और जिह्वा भी कहा गया है क्योंकि यज्ञ में डाले गए घी व अन्य सामग्री को यह देवताओं तक पहुंचाता है। जिसको देवगण भक्षण करते हैं।[14]

भोज्य सामग्री

लकड़ी व घी इसका भोजन है और पिघला हुआ मक्खन इसका पेय है।[15]. यही इसका भोजन है। जब अंगुलियों द्वारा वेदि में घी की आहुति दी जाती है, तब अग्नि प्रसन्न होता है।[16] इन उल्लेखों के आधार पर कहा जा सकता है कि घृत और समिध ही अग्नि की भोज्य सामग्री हैं।

वाहन

अग्नि का वाहन रथ है जिसे दो या अधिक घोड़े खींचते हैं। जिसके द्वारा वे मनुष्यों द्वारा प्रदत्त हवि ग्रहण कराने के लिए देवताओ को लाते हैं।

ऋग्वेद के एक मन्त्रानुसार श्यामवर्ण, लालवर्ण अथवा शुक्लवर्ण के घोड़े अग्नि के रथ को खींचते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि अग्नि की अनेक रंगों की ज्वालाएं ही उसके घोड़े हैं।[17]

अग्नि के कार्य एवं विशेषताएं

ऋग्वेद के द्वितीय मण्डल में अग्नि देव के अनेक कार्यों और विशेषताओं का उल्लेख मिलता है।

यह देव अन्तरिक्ष से वृष्टि करने वाला, पृथिवी में स्थित, सबका पालक एवं आनन्द प्रदान करने वाला है।[18]

यह यज्ञ को सब ओर से व्याप्त करता है। इसको मनुष्य हवियों और स्तुतियों से अलंकृत करते हैं। तेजस्वी ज्वालाओं वाला अग्नि बढ़ती हुई औषधियों के बीच पुनः पुनः प्रज्वलित होकर अपने प्रकाश से द्यावा पृथिवी को प्रकाशित करता है जैसे नक्षत्रों से आकाश प्रकाशित होता है। उसी प्रकार अग्नि भी सब पदार्थों को प्रकट करने वाला होता है।[19]

धुलोक को जिस प्रकार सूर्य प्रकाशित करता है उसी प्रकार अनेक रंगों वाला अग्नि इस पृथ्वी को अपनी ज्वालाओं से प्रकाशित करता है।[20]. यह देव सम्पूर्ण वृक्ष और वनस्पतियों के अन्दर रहकर अपनी उष्णता से उनको बढ़ाता है।[21]

अग्नि देव को होता, पवित्र करने वाला, नेष्टा, प्रशास्ता, अध्वर्यु, ब्रह्मा और यजमान कहते है।[22] अग्नि देव जरा से रहित अत्यन्त सुन्दर, उत्तमनेता और मनोहर गति वाला है।[23] यह अदिति इला, होता, भारती, वृत्र को मारने वाला तथा सरस्वती हैं।[24]

ऋग्वेद के द्वितीय मण्डल के एक मन्त्र में उल्लेख मिलता है कि अग्नि, इन्द्र, सोम आदि देवों से सुरक्षित मनुष्य कभी भी नष्ट नहीं होता, बल्कि अपने शत्रुओं को नष्ट करता है। सर्वपालक यह देव सभी देवताओं में प्रमुख है तथा शोभा को धारण करने वाला, अमर, बलवान और बुद्धिमान होने से सबके द्वारा पूज्य है। अग्नि देव अपने विविध गुणों के कारण इन्द्र, विष्णु और बह्मा तथा मेधावी नाम से भी पुकारा जाता है।[25]

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि अग्नि तीनों लोकों में स्थापित है। अग्नि के बिना कोई भी कार्य सम्भव नहीं हो सकता। अग्नि देवताओं का मुख है इसी के द्वारा देवता हवि ग्रहण करते हैं। यह अग्नि मनुष्य और देवताओं के बीच सम्बन्ध स्थापित करता हैं। यह अग्नि ही मनुष्यों को अन्न आदि देने वाला है जिससे सभी मनुष्य जीव जन्तु अपना भरण पोषण करते हैं। अग्नि सभी के लिये लाभकारी होता है। पशु–पक्षी मनुष्य और देवगण इसी अग्नि पर आश्रित रहते हैं, इसलिये यह सर्वदेव हैं।

मनुष्य को चाहिये कि वह अग्नि के गुणों को अपने अन्दर धारण करके अग्नि के समान बनने का प्रयत्न करे।

1. ऋग्वेद, हिन्दी भाष्य, भूमिका
2. अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नघातमम्। ऋ॰ 2.1.1
3. अग्निः कस्मात्? अग्रणीर्भवति, अग्रं यज्ञेषु प्रणीयते, अघ्गनयति सन्नममानः। अक्नोपनो भवतीति। या॰ निरुक्तम्, 7.4
4. शाकपूणि :– इताद्, अक्ताद्, दग्धाद् वा नीतात्। स खल्वेतेरकारमादत्ते, गकारमनक्तेः वा दहतेः वा, नी परः। या॰निरुक्तम्, 7.4
5. विद्येम ते परमे जन्मनग्ने विधेम स्तोमैश्वरे सधस्थे। यस्माद् योनेरुदारिथा यजे तं प्र त्वे हवीषि जुहुरे समिद्धे।। ऋ॰ 2.9.3
6. उप्तनायां सुषूतं अजनयन्। ऋ॰ 2.10.3
7. यो अश्मनोरन्तरग्निं जजान – ऋ॰, 2.12.3
8. यदी मातुरूप स्वसा घृतं भरन्त्यास्थित। तासामध्वयुर्रागतौ यवो वृष्टीव मोदते। ऋ॰, 2.5.6
9. त्वं वनेभयस्त्वमोष्धीभ्य स्त्वं नृणां नृपते जायसे शुचिः। ऋ॰, 2.1. 1.
10. होता जनिष्ट चेतनः पिता पितृभ्य ऊतये। प्रयश्चञजेन्यं वसु शकेम वाजिनो यमम्।। ऋ॰, 2.5.1
11. आ यस्मिन् त्सप्त रश्मयस्तता यज्ञस्य नेतरि। मनुष्वद् दैव्यमष्टमं पोता विश्वं तदिन्वति।। ऋ॰, 2.5.2
12. ऋग्वेद का सुबोध भाष्य, भूमिका, पृ॰स॰4.
13. ऋग्वेद का सुबोध भाष्य, भूमिका। पृ॰स॰5.
14. त्वामग्न आदित्यास आस्यं त्वां जिह्वां शुचय श्चक्रिरे कवे। त्वां रातिषाचो अध्वरेषु सश्चिरे त्वे देवा हविरदन्त्याहुतम्।। ऋ॰, 2.1.13 15.
15. ह॰कृ॰, ऋ॰ क्॰ पृ॰13
16. यदी मातुरुप स्वसा घृतं भरन्त्यस्थित। तासामध्वर्युरागतौ यवो वृष्टीव मोदते। ऋ॰, 2.5.6
17. श्रूया अग्निश्चित्राभानुर्हवं में विश्वाभिर्गीभिरमृतो विचेताः। श्यावा रथं वहतो रोहिता वो तारुषाह चक्रे विभृवः।। ऋ॰, 2.10.2
18. तमुक्षमाणं रजसि स्व आ दमे चन्द्रमिव सुरूचं हार आ दधुः। पृश्न्याः पतरं चितयन्तमक्षभिः पाथो न पायुं जनसी उभे अनु।। ऋ॰, 2.2.4
19. स होता विश्वं परि भूत्वध्वरं तमु हव्यैर्मनुष ऋञजते गिरा। हिरिशिप्रो वृधसानासु जर्भुरद् द्यौ र्न स्तृभिश्चितयद् रोदसी अनु।। ऋ॰, 2.2.5
20. आ यः स्वर्ण भानुना चित्रो विभात्यर्चिषा। अञजानो अजरैरभि। ऋ॰, 2.8.4
21. त्वया मर्तासः स्वदन्त आसुतिं एवं गभो वीरूधां जज्ञिषे शुचिः, ऋ॰, 2.1.14.
22. तवाग्ने होत्रं तव पोत्रमृत्वियं तव नेष्ट्रं त्वमग्निऋतायतः। तव प्रशास्त्रं त्वमध्वरीयसि ब्रह्मा चासि गृहपतिश्च ना दमे।। ऋ॰, 2.1.2
23. उभयं ते न क्षीयते वसव्यं दिवेदिवे जायमानस्य दस्म। कृधि

24. क्षुमान्तं जरितारमग्ने कृधि पति स्वपत्यस्य रायः।। ऋ॰, 2.9.5
25. त्वमग्ने अदितिर्देवं दाशुषे त्वं होत्रा भारती वर्धसे गिरा।
    त्वमिला शतहिमासि दक्षसे त्वं वृत्रहा वसुपते सरस्वती।। ऋ॰, 2.1.11
26. त्वमग्न इन्द्रो वृषभः सतामसि त्वं विष्णुरुरुगायो नमस्यः।
    त्वं ब्रह्मा रयिविद् ब्रह्मणस्पते त्वं विधर्तः सचसे पुरन्ध्या।। ऋ॰, 2.1.3

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

	ग्रन्थ का नाम	ग्रंथकार का नाम/सम्पादक	प्रकाशक
1.	ऋग्वेद	स्वामी दयानन्द भाष्य सहित सम्पादक मीमांसक, बहालगढ़–1973	युधिष्ठिर
2.	ऋग्वेद का सुबोध भाष्य	श्रीपाद दामोदरसातवलेकर	स्वाध्याय मण्डल पारड़ी
3.	निरुक्त	पण्डित सीताराम शास्त्री	परिमल पब्लिकेशन, दिल्ली
4.	हिन्दी निरुक्त	कपिल देव शास्त्री, चुन्नीलाल शुक्ल	साहित्य भण्डार सुभाष बाजार, मेरठ
5.	संस्कृत–हिन्दीकोश	वामन शिवराम आप्टे	मोती लाल बनारसी दास पब्लिकेशन, दिल्ली।